कभी भी अँग्रेजी भारतीय भाषा नहीं बन सकती।

(देश के वरिष्ठम भाषाविज्ञानियों में से प्रो. के. वी. सुब्बाराव आज भी भाषायी शोध के प्रति समर्पित हैं, हाल ही दक्षिण एशिया की भाषाओं पर केंद्रित एक महत्त्वपूर्ण पुस्तक लिखने के कारण चर्चा में प्रो. सुब्बाराव से अरिमर्दन कुमार त्रिपाठी से की गई बात-चीत के मुख्य अंश)

अरिमर्दन : एक भाषा का दूसरी भाषा पर कितना प्रभाव पड़ता है और ऐतिहासिक दृष्टि से देश की भाषाओं के बारे में आपकी क्या राय है ?

सुब्बाराव : जब दो भाषाएँ साथ में आती हैं तो इस आपसी संबंध से भाषाएँ प्रभावित होतीं हैं, जैसे हिंदी हैदराबाद में आई थी, तो तेलुगु के साथ इसका संवाद हुआ था। भारोपीय परिवार की भाषा कोंकणी जब द्रविण भाषाई परिवार की भाषा कन्नड़ भाषी क्षेत्र मंगलूर में बोली जाने लगी, तो कन्नड़ के प्रभाव कोंकणी इतनी प्रभावित हुई कि यह गोवा एवं महाराष्ट्र में बोली जाने वाली कोंकणी उससे बिलकुल अलग दिखने लगी जैसे दक्खिनी हिंदी मूल हिंदी से कई मायने में अलग है। चार-पाँच सौ साल से हैदराबाद में बोली जाने वाली भाषाएँ जैसे हिंदी एवं पंजाबी आदि तेलुगु के संपर्क में आईं, तो तेलुगु के की वाक्य-संरचना के अनुरूप इसमें परिवर्तन आया और इसी परिवर्तित रूप को 'दक्खिनी हिंदी' कहा जाता है, उदाहरणस्वरूप हिंदी की अन्विति-व्यवस्था, कर्ता के साथ जो 'ने' परसर्ग का प्रयोग आदि का चलन 'दक्खिनी हिंदी' में समाप्त हो गया। इसी प्रकार हिंदी 'उसने कहा कि' बोला जाता है, लेकिन 'दक्खिनी हिंदी में 'कि' का प्रयोग दूसरे प्रकार से होने लग गया और इसके स्थान पर 'बोलके' का प्रयोग होने लगा। इसका कारण यह है कि तेलुगु में दो वाक्यों को जोड़ने के लिए 'अनि' का प्रयोग होता है, जिसका अर्थ 'बोलके' (Having said) होता है। तेलुगु में यह वाक्यों के योजक के रूप कार्य करता है। इसी प्रकार मराठी के कुछ लोग भालावली क्षेत्र से चार सौ साल पहले मंगलूर में आए थे, तो उनकी मराठी पर कन्नड़ का इतना असर पड़ा कि जैसे कोंकणी बदल गई, वह मराठी भी बदल गई, और वही भालावली भाषा है। इस प्रकार जब भाषाएँ एक दूसरे के

संपर्क में आतीं हैं , तो एक दूसरे का वाक्य-गठन और ध्वनि-व्यवस्था पर परस्पर प्रभाव पड़ता है। इस क्रम में रूप-संरचना ही एक-दूसरे से सर्वाधिक कम प्रभावित होते हैं।।

अरिमर्दन: दक्षिण एशिया की विभिन्न भाषाओं में निहित समानताओं के बारे में कुछ बताइए।

सुब्बाराव – दक्षिण एशिया में अनेक भाषाएँ बोली जातीं हैं, सिर्फ भारत में ही जो भाषाएँ बोली जाती हैं, उनके बारे में मतभेद हैं, कोई 1560 तो कोई 800 की संख्या बताते हैं, इसके बारे में कुछ नहीं कहना चाहूँगा, लेकिन हमारी भाषाओं की संख्या अधिक है, यह तो सत्य है। ये भाषाएँ चार मुख्य भाषा- परिवारों से संबंधित हैं, हाल ही में अण्डमानी नाम के एक और भाषा-परिवार को इसमें जोड़ा गया है। इनमें से द्रविड़ भाषाएँ दक्षिण में बोली जाती हैं और आर्य भाषाएँ उत्तर में। पूर्वोत्तर में दो भाषा-परिवारों की भाषाएँ बोली जाती हैं। प्रथम तिब्बती-वर्मी, जो साइनो-तिब्बती भाषा-परिवार का एक अंग है और दूसरी एस्ट्रो-एशियाई भाषा-परिवार। यहाँ पर मुख्य रूप से खासी, मनार, पनार, जैंतिया भाषाएँ हैं, जो मान खमेर समूह से संबंधित हैं और इसकी दूसरी शाखा से संबंधित भाषाएँ बिहार, झारखंड, उड़ीसा और पश्चिम बंगाल में मिलती हैं। ये 'मुंडा भाषा परिवार की भाषाएँ हैं। मुंडारी, संथाली, हो, सवरा, खड़िया, जुवांग आदि इसी भाषा-परिवार की भाषाएँ हैं। मान खमेर भाषाएँ और मुण्डा भाषाएँ दोनों एक ही बड़े परिवार एस्ट्रो-एशियाई से आई हैं। गौरतलब है कि मान-खमेर भाषाओं में क्रिया वाक्य के मध्य (verb-medial) में आती है, जैसे अँग्रेजी और फ्रेंच जैसी भाषाओं में होता है, जबकि शेष सभी भारतीय भाषाओं में क्रिया वाक्य के अंत (verb-final) में आती है।

अरिमर्दन – संस्कृत और द्रविड़ भाषाओं के आपसी संबंधों के बारे में आप की क्या राय है ?

सुब्बाराव – संस्कृत हजारों साल से भारत की भाषा रही है, इसलिए इसका प्रभाव द्रविड़ भाषाओं पर बहुत पड़ा है और इसके साथ द्रविड़ भाषाओं का प्रभाव संस्कृत पर भी पड़ा है। दरअसल संस्कृत को द्रविड़ भाषा वालों ने बहुत महत्त्व दिया था और धार्मिक दृष्टि से भी लोग जुड़े हुए हैं। इसलिए साहित्य, धर्म आदि कारणों से द्रविड़ भाषाएँ संस्कृत से प्रभावित हुईं। इसी क्रम में संस्कृत से अनेक शब्द सीधे द्रविड़ भाषाओं में आए। प्राचीन साहित्य में तमिल के अतिरिक्त तेलुगु, मलयालम या कन्नड़ में एक तरह प्रतिस्पर्धा थी कि कौन संस्कृत से अधिकाधिक शब्दों का प्रयोग अपने साहित्य में करता है। इसी प्रकार संस्कृत छंद-योजना और शैली का द्रविड़ भाषाओं पर बहुत प्रभाव पड़ा था, हालाँकि तमिल पर संस्कृत का प्रभाव बहुत कम देखा जाता है।

अरिमर्दन – आपकी दृष्टि में क्या कारण हैं कि आज हम संस्कृत के ज्ञान –साहित्य की तुलना में अँग्रेजी से आसानी जुड़ जाते हैं ?

सुब्बाराव – देखिये देश में संस्कृत पर जो भी काम हुआ है, वह आधुनिक भाषाओं में सामने आया है, सबने अपनी-अपनी भाषाओं में संस्कृत को देखा है, चूँकि अँग्रेजी आज देश-विदेश के संपर्क एवं विद्वता की भाषा है इसलिए अँग्रेजी से जुड़ाव स्पष्टत: दिखता है। हमें यह भी देखना होगा कि विदेशों में भी संस्कृत का बहुत अध्ययन हुआ है और बहुत अच्छे शोध-कार्य अमेरिका और इंग्लैंड जैसे देशों में भी हुआ। इसमें संस्कृत के व्याकरणिक संरचना से लेकर साहित्य तक के कार्य शामिल हैं। कुछ विदेशी विद्वान जैसे जार्ज कार्डोना, एसकाल, स्किपर्स आदि ने अपने-अपने ढंग से बड़े-बड़े काम किए थे। आज भी हंसहाक जैसे विद्वान संस्कृत पर कार्य कर रहे हैं। इस क्रम भारतीय विद्वान भी हैं, जो इनके कार्यों से सहमत-असहमत होकर संस्कृत पर केंद्रित शोध में संलग्न हैं। इनमें पुणे के प्रो॰जोशी आदि हैं। इसके साथ ‘हवाई विश्वविद्यालय’ रमानाथ शर्मा, मिशिगन विश्वविद्यालय के माधव देशपांडे आदि ने भी बहुत काम किया था। लेकिन इसका दूसरा पक्ष यह है कि इन सभी शोध-कार्यों की भाषा प्राय: अँग्रेजी रही है, इसलिए संस्कृत भी अँग्रेजी से जुडने का माध्यम बन गई। चूँकि वैश्विक संप्रेषण की भाषा अँग्रेजी है, इसलिए इसका विस्तार होता चला गया।

अरिमर्दन- तो इसका एक कारण कहीं भारत की भाषाई विविधता तो नहीं है , क्योंकि भारत के अनेक विद्वान पूरे देश में वह सम्मान नहीं पा पाते हैं, जितनी आसानी से अँग्रेजी का कोई विद्वान पा जाता है ?

सुब्बाराव – इससे मैं सहमत नहीं हूँ। संस्कृत मेरा विषय नहीं हैं, इसलिए आपको जो संस्कृत में काम करते हैं वे इसका मूल्यांकन बेहतर कर सकते हैं। विद्वान भारत में भी हैं और विदेशों में भी हैं कौन कितना बड़ा है इस पर मैं कुछ नहीं कहना चाहता।

अरिमर्दन- क्या आज के प्रसिद्ध भाषावैज्ञानिक चॉमस्की पर संस्कृत का कोई प्रभाव है ? क्योंकि प्रजनात्मकता को कुछ लोग कहते हैं कि संस्कृत में पहले से ही है। वाक्य का महत्त्व भी संस्कृत था, इस पूरे परिप्रेक्ष्य में कहीं चॉमस्की भारत से कुछ ऊर्जा पाते हैं क्या ?

सुब्बाराव – चॉमस्की ने जब अपना व्याकरण बनाया था तब हो सकता है कि किसी बिन्दु पर संस्कृत में कही गयी किसी बात से सहमत हों, लेकिन समग्रता में मैं नहीं समझता कि संस्कृत का कोई प्रभाव चॉमस्की के काम पर सीधे पड़ा है।

अरिमर्दन – अँग्रेजी की तुलना में समकालीन हिंदी सहित भारतीय भाषाओं में निहित ज्ञान के वर्तमान स्तर से क्या आप संतुष्ट हो सकते हैं ?

सुब्बाराव – दरअसल अँग्रेजी में अमेरिका, इंग्लैंड, आस्ट्रेलिया सहित तमाम देशों में काम होता है, लेकिन भारतीय भाषाओं में काम करने वालों की संख्या बहुत सीमित है और जो है भी वह हिंदी, तमिल, मलयालम आदि भाषाओं में विभक्त हैं, इसलिए अँग्रेजी में जितना काम हुआ है, उतना भारतीय भाषाओं में संभव नहीं है।

अरिमर्दन – विदेशों भाषाविदों में एक लंबी परंपरा है, जो हिंदी एवं उर्दू को दो लिपि में लिखी गई एक ही भाषा मानती है। इसको एक भाषाविज्ञानी के रूप में आप कैसे देखते हैं?

सुब्बाराव – हिंदी और उर्दू में कोई अंतर नही है। व्याकरणिक संरचना दोनों भाषाओं की समान है, मैं आप से पूछूं कि 'क्या आपने रोटी खाई है ' यह वाक्य हिंदी का है या उर्दू का ? आप कहेंगे कि जितना हिंदी का है, उतना ही उर्दू का है। जो अंतर है वह शब्दावली और लिपि का है। जब हिंदी को कोई शब्द चाहिए होता है या नया शब्द बनाना है, तो वह संस्कृत की तरफ देखती है और 'उर्दू' अरबी और फारसी की तरफ। हालाँकि फारसी और अरबी के अनेक शब्द हिंदी में भी प्रयोग में आते हैं। इसलिए हम ये नहीं कह सकते हैं कि हिंदी और उर्दू अलग भाषाएँ हैं। वैसे भी भाषा क्या है, इसका निर्णय करने के लिए लिपि या शब्दकोश से अधिक महत्त्वपूर्ण उसके वाक्य-संरचना है और हिंदी एवं उर्दू का व्याकरण बिलकुल समान है। इस संबंध में एक बात अकसर बोली जाती है कि उर्दू में 'शेर-ए-पंजाब' जैसी संरचना होती है, जो हिंदी से अलग है और इसका अर्थ 'पंजाब का शेर' हो जाता है। ऐसा इसलिए हुआ कि उर्दू ने इस संरचना को दूसरी भाषा से लिया है और इसमें प्रजनात्मकता नहीं है ऐसा होता तो 'स्कूल का बच्चा' को स्कूल-ए–बच्चा जैसे प्रयोग भी उर्दू के चलन में होते।

अरिमर्दन – वर्तमान समय में समाप्त हो रही भाषाएँ एक चिंताजनक पक्ष है, इसके समाधान के लिए एक भाषाविज्ञानी के रूप में आप क्या सुझाव दे सकते हैं ?

सुब्बाराव – आज के समय में भाषाओं का संरक्षण एक कठिन काम है, एक तरफ अँग्रेजी का वर्चस्व है विशेषकर रोजगार के क्षेत्र में। इससे आगे बढ़ेंगे तो इस क्षेत्र में हिंदी का वर्चस्व स्थापित हो रहा है, यदि बिहार में कोई मुंडा भाषा बोलने वाला होगा तो उसके सामने प्रश्न यह है कि हिंदी सीखे या अँग्रेजी? ऐसे में 'मुंडारी' या 'हो' जैसी भाषाओं से उसका कोई संबंध नहीं होता। यही हाल असम आदि क्षेत्रों में है जहाँ दिमासा, राभा, निसी, बोडो इतनी सारी

भाषाएँ हैं, लेकिन अँग्रेजी उनके लिए रोजगार की भाषा है। इसी हाल दक्षिण में भी है। छोटी भाषाएँ समाप्त हो रही हैं और हिंदी, तेलुगु, तमिल, मलयालम, कन्नड़ और असमी जैसी प्रभावशाली भाषाएँ स्वत: बढ़ रही हैं। इसके साथ अँग्रेजी का प्रभाव सारी भाषाओं पर पड़ रहा है। अँग्रेजी सभी भारतीय भाषाओं को खत्म कर रही है और भारतीय भाषाएँ विशेषकर बड़ी-बड़ी भाषाएँ , अपनी छोटी भाषाओं को खत्म कर रही हैं। जैसे बड़ी मछली छोटी मछली को खा जाती है।

अरिमर्दन – हिंदी पर बाज़ार का प्रभाव पड़ रहा है, शब्द सीधे अँग्रेजी से आ रहे हैं, वाक्य-संरचना भी प्रभावित हो रही है, इस प्रकार 'हिंग्लिश' हिंदी का रूप बनती जा रही है। इस पूरे संदर्भ को आप कैसे देखते हैं ?

सुब्बाराव – भाषा एक प्रवाह है, नदी के प्रवाह की तरह ही है। इसमें नदी के प्रवाह को तो आज बाँध बना कर रोका जा रहा है, लेकिन भाषा के प्रवाह को नहीं रोका जा सकता। हमारे पास कोई ऐसी अकादमी नहीं है कि जो भाषा के रूप का निर्धारण करे। क्या आज तक फारसी, अरबी के शब्दों के प्रयोग को हिंदी में रोका जा सका? व्यापक प्रयोग में कोई इसे नहीं रोक पाया है। इसलिए भाषा को रोकना, भाषा के प्रवाह को रोकना बहुत ही कठिन है। इसी प्रकार 'अँग्रेजी' के शब्द आ रहे हैं और आते रहेंगे। जहाँ वाक्य संरचना का सवाल है यह प्राय: प्रभावित नहीं होती है , लेकिन हिंदी में यह परिवर्तन हुआ है। दरअसल हिंदी में ' कि' का प्रयोग जैसे – 'राम ने कहा था कि मैं जा रहा हूँ ' जैसा प्रयोग हिंदी, कश्मीरी और पंजाबी नहीं था, यह फारसी का प्रभाव है। हमारे यहाँ 'कि' का प्रयोग से पहले संस्कृत में 'इति' था। वेदों के संस्कृत में तो 'इति' दो वाक्यों को योजक का काम करता था। पहले 'इति' वाक्य के पहले प्रयोग होता था, लेकिन बाद में वाक्य के अंत में आने लगा।

जैसे- अस्मि वैदेशिकः इति प्रच्छामि। 'मैं ये पूछ रहा हूँ, इसलिए कि मैं विदेशी हूँ'।

'इति' संस्कृत वाक्य के बायीं तरफ था। इसे यदि ऋग्वेद के बाद के में दो वेदों में देखेंगे तो कुछ समय तक दोनों साथ चले। उसके बाद बाकी वेदों में 'इति' वाक्य के दायीं तरफ आ गया। ऐसा इसलिए हुआ कि द्रविड़ भाषाओं का असर संस्कृत पर पड़ा था। इसी तरह फारसी के प्रभाव से 'इति' समाप्त होकर 'कि' में परिवर्तित हो गया, बायीं तरफ हो गया। लेकिन बांग्ला, असमी, उड़िया, मराठी, गुजराती, कोंकणी आदि भाषाओं में इति का जो संस्कृत, पालि, प्राकृत था, वह अभी भी मौजूद है, 'बोल के' के रूप में।

अरिमर्दन – भारतीय अकादमिक जगत में भाषाविज्ञान कि क्या स्थिति है ? इसको और बेहतर बनाने के लिए आप क्या सुझाव देंगे ?

सुब्बाराव- हिंदी में भाषाविज्ञान की बहुत प्रमुखता है, लेकिन विश्वविद्यालयों में जितना काम भारतीय भाषाओं में होना चाहिए उतना नहीं हो रहा है। इसके कई कारण हो सकते हैं। धन की कमी, व्यक्ति की कमी या जो लोग हैं वे अपेक्षित काम नहीं कर पा रहे हों। चाहे जो भी कारण हों, लेकिन मैं चाहता हूँ कि भारतीय भाषाओं का व्याकरण ज्यादा से ज्यादा लिखा जाय। आधुनिक सिद्धांतों के अनुरूप हमारी भाषाओं में प्रयोगिक कार्य हों, अधिक से अधिक व्याकरण लिखे जाय ताकि जनजातीय भाषाओं को भी उनका व्याकरण मिले और उसमें पाठ तैयार हो। आजकल कंप्यूटर के अनुसार भी भाषाओं का विश्लेषण हो रहा है, उस पर भी देश में तेजी से काम होना चाहिए।

अरिमर्दन – भारतीय परिदृश्य में भाषाई विविधता किसी सत्ता के लिए समस्या है या समाधान ?

सुब्बाराव – भाषाई विविधता अच्छी बात है और यह हमेशा से रही है और आगे भी रहेगी। इन सब में हम लोग हमेशा संवाद करते रहे हैं। किसी सत्ता-संरचना के लिए इससे कोई समस्या नहीं होनी चाहिए। सबसे बड़ी बात यह है कि हिंदी का एक रूप पूरे भारत में आ रहा है, कुछ क्षेत्रों को छोड़कर। लेकिन पूरे देश में आप हिंदी भाषा के माध्यम से यात्रा कर सकते हैं और कभी भी अँग्रेजी भारतीय भाषा नहीं बन सकती। मैं समझता हूँ कि हिंदी ही बन सकती है। इसलिए हिंदी भाषा को जितना हो सके हम फैलाएँ। हालाँकि इसमें बॉलीवूड का प्रभाव तो है। इसके साथ हिंदी जो पश्चिमी बंगाल, आंध्र-प्रदेश बोली जाती है उसमें जो बदलाव आएगा उसे स्वीकार करना चाहिए। जहाँ तक संप्रेषण का सवाल है, तो हिंदी में थोड़ा सा फर्क आ भी जाए, और एक आदमी दूसरे आदमी से बात करके समझ जाएगा, तब तक हमें कोई चिंता नहीं होगी।